भारत की विदेश–नीति
(Foreign Policy Of India)

डॉ0 रत्नेश रंजन*

ABSTRACT- प्रत्येक देश अपने राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा एवं अभिवृद्धि के लिए कुछ नीतियाँ निर्धारित करता है। वह नीति जिसका सम्बन्ध अन्य देशों के आचरण तथा उनके साथ सम्बन्धों से होता है, विदेश नीति (Foreign Policy) कहलाती है। आवश्यक होने पर प्रत्येक राष्ट्र यह प्रयास करता है कि वह अपने व्यवहार को अपनी रूचि के अनुसार परिवर्तित करवाये। कभी–कभी उसे अपने व्यवहार में भी परिवर्तित करना पड़ जाता है। राष्ट्रों के व्यवहार में परिवर्तन करवाने के आधार को विदेश–नीति का सार कहा जाता है। मौडेल्स्की ने विदेश–नीति को परिभाषित करते हुए लिखा है कि, **''कोई राज्य अन्य राज्यों के व्यवहार में परिवर्तन करवाने के लिए जो उपाय करता है, उन्हें विदेश–नीति कहा जाता है।''**

लेकिन विदेश–नीति का सम्बन्ध सिर्फ परिवर्तन तक ही सीमित नहीं है बल्कि इसमें यथास्थिति का तत्व भी शामिल है।

आज सम्पूर्ण विश्व के देश अपने–अपने राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखकर अपनी विदेश–नीति का संचालन कर रहे हैं। भारत ने भी स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से अपनी परिस्थितियों को ध्यान में रखकर अपनी विदेश–नीति का संचालन किया है, भारत 15 अगस्त, 1947 को स्वतन्त्र हुआ किन्तु भारत की विदेश–नीति का सूत्रपात 2 सितम्बर, 1946 से माना जा सकता है, जब एक अंतरिम सरकार का निर्माण हो चुका था और यह समझ आने लगा था कि भारत वास्तव में अपनी विदेश–नीति का अनुकरण करने को स्वतन्त्र है। ब्रिटिश दासता से मुक्ति पाने के बाद भारत का प्रमुख लक्ष्य शीघ्रता से अपनी विदेश–नीति का निर्माण करना था। भारत के अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय का सदस्य बनते ही विश्व में उपनिवेशवाद के उन्मूलन की प्रक्रिया शुरू हो गयी। भारत ने एशिया एवं अफ्रीका के देशों में उपनिवेशवाद विरोधी तथा साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष को पूर्ण समर्थन प्रदान किया। फिर भी भारत की विदेश–नीति मूल रूप से उसके इतिहास और संस्कृति पर आधारित है। लोक सभा में बोलते हुए प्रधानमन्त्री पं0 जवाहर लाल नेहरू ने मार्च, 1950 में कहा था कि, **''यह नहीं सोचना चाहिए कि हम बिल्कुल नये सिरे से शुरूआत कर रहे हैं। यह एक ऐसी नीति है, जो कि हमारे समकालीन इतिहास एवं सारे राष्ट्रीय–आन्दोलन से निकली है और जिसका विकास उन विविध आदर्शों से हुआ है, जिनकी हमने घोषणा की है।''**

***व्याख्याता, राजनीति विज्ञान विभाग,मॉडल डिग्री कॉलेज, मलकानगिरी उड़ीसा**

भारतीय विदेश–नीति का निर्धारण अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति और राष्ट्रीय हितों के परिप्रेक्ष्य में किया गया है। यह सत्य है। तथापि इसके निर्माण में प्राचीन भारतीय परम्पराएँ और स्वाधीनता संग्राम में उच्च आदर्शों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। भारतीय दर्शन एवं चिन्तन में सदैव भिन्न–भिन्न मत–मतान्तरों को स्वीकार किया गया है और सहिष्णुता उसका स्वभाव रहा है। अतः जब भारत ने अपनी विदेश–नीति में गुट–निरपेक्षता और विवादों के शान्तिपूर्ण समाधान के तत्त्वों को सर्वोपरि महत्व दिया तो इसके पीछे भारत की यही मन्त्रणा थी। भारतीय विदेश–नीति में उपनिवेशवाद, जातिवाद, फाँसीवाद आदि का विरोध सन्निहित है। जिसे स्वाधीनता संघर्ष काल में भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस अनेक प्रस्तावों द्वारा स्पष्ट कर चुकी थी। यह बात सही है कि भारत की विदेश–नीति का उदय आकस्मिक नहीं है, बल्कि इसके आधार पर ऐतिहासिक है। **पामर एवं पकिंस** के शब्दों में, **''भारत की विदेश–नीति की जड़ें विगत कई भाताब्दियों में विकसित समस्याओं के मूल में छिपी हैं, इसमें चिन्तन भौलियों ब्रिटिश नीतियों की विरासत, स्वाधीनता आन्दोलन का वैदेशिक मामलों में भारतीय–राष्ट्रीय काँग्रेस की पहुँच, गाँधीवादी दर्शन के प्रभाव, अहिंसा, साध्य और साधनों के महत्व के गाँधीवादी सिद्धान्तों आदि का प्रभावशाली योगदान रहा है।''**

पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने भारत की विदेश–नीति के उद्देश्यों की घोषणा करते हुए कहा था कि, **''हम अन्तर्राष्ट्रीय–सम्मेलनों में एक स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में, अपनी नीति के अनुसार पूर्ण–भागीदारी करेंगे। हम किसी अन्य राष्ट्र के पीछे आकर सम्मेलनों में भाग नहीं लेंगे। हमें आशा है कि हम अन्य राष्ट्रों के साथ प्रत्यक्ष और नजदीकी सम्बन्ध स्थापित करेंगे तथा विश्व–शान्ति एवं स्वतन्त्रता की अभिवृद्धि के लिए उनके साथ सहयोग करेंगे.....हमारी विशेष इच्छा है कि औपनिवेशिक तथा पराधीन देशों और लोगों का उद्धार हो और सिद्धान्त तथा व्यवहार दोनों में सभी जातियों के लोगों को समान अवसर प्राप्त हों।''** भारतीय विदेश नीति के प्रमुख उद्देश्यों को इस प्रकार देख सकते हैं–

- अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा कायम रखना और उस प्रोत्साहन देना।
- सभी पराधीन देशों की स्वतन्त्रता का प्रोत्साहन देना, क्योंकि भारत की दृष्टि से उपनिवेशवाद मूल मानवीय अधिकारों का उल्लंघन ही नहीं बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष का सतत कारण भी है।
- अन्तर्राष्ट्रीय विवादों का शान्तिपूर्ण समाधान।

- जातिवाद का विरोध और ऐसे समानतापरक समाज के विकास का समर्थन जिसमें रंग, जाति और वर्ग के किसी भेद–भाव के लिए कोई स्थान न हो।
- इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सम्पूर्ण मानवता को व्यापक हितों को ध्यान में रखते हुए सभी अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों और निर्भीक रूप से संयुक्त राष्ट्र संघ के साथ सक्रिय सहयोग।

पामर एवं पर्किंस ने भारतीय विदेष–नीति के आधारभूत उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को इस प्रकार गिनाएँ हैं–

- जातीय भेद–भाव और साम्राज्यवाद का प्रबल विरोध।
- साम्यवाद अथवा भक्ति राजनीति की अपेक्षा राष्ट्रों के आधारभूत आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक विकास पर बल।
- एश्याई देशों की उपेक्षा अथवा उनके विरूद्ध बल न सहने का आग्रह।
- स्वतन्त्रता एवं असंलग्नता की नीति पर बल।
- शीत–युद्ध और क्षेत्रीय सुरक्षा संगठनों से बचना।
- संयुक्त राष्ट्र संघ और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग में विकास आदि।

प्रत्येक राष्ट्र की विदेश–नीति का निर्धारण कुछ तत्त्व करते हैं। भारत इसका अपवाद नहीं है। भारत की विदेश नीति को निर्धारित करने वाले तत्त्वों को निम्नलिखित प्रकार से दृष्टिगत किया जा सकता है–

भौगोलिक तत्त्व– किसी भी देश की विदेश–नीति के निर्माण में उस देश की भौगोलिक परिस्थितियाँ प्रमुख और निर्णायक महत्त्व रखती है। नेपोलियन बोना पार्ट ने कहा था कि, **''किसी भी देश की विदेश–नीति उसके भूगोल द्वारा निर्धारित होती है।''**डॉ0 एयर्स के विदेश–नीति उसके भूगोल द्वारा निर्धारित होती है। डॉ0 एयर्स के शब्दों में, **''समझौते तोड़े जा सकते हैं, संधियाँ भी एकतरफा समाप्त की जा सकती हैं, परन्तु भूगोल अपने शिकार को कसकर पकड़े रहता है।''** भारत एक विशाल भौगोलिक प्रदेश है, जिसकी 3500 मील लम्बी समुद्री सीमा और 8200 मील लम्बी स्थल सीमा है, समुद्री सीमा की तीन दृष्टियों से विशेष महत्व है–प्रथम, हिन्द महासागर में महाशक्तियों की होड़ भारत की सुरक्षा को खतरा उत्पन्न कर सकती है, द्वितीय, भारत का अधिकांश विशाल समुद्री तट की सुरक्षा हेतु भारत को शक्तिशाली नौसैनिक बल का विकास करे। भारत की स्थल सीमाएँ पाकिस्तान, चीन, नेपाल, म्यांमार से मिलती है।

आर्थिक एवं सैनिक तत्त्व– भारत सदियों से गुलामी में रहा और उसका भयंकर आर्थिक शोषण किया गया। अतः स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद देश की विदेश–नीति के निर्धारण में आर्थिक और सैनिक तत्त्वों को विशेष महत्व दिया गया। भारतीय

विदेश–नीति के आर्थिक आयाम के तीन प्रमुख सूचक हैं– सुरक्षा, विदेशी संचयता, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार। यह निम्नलिखित तथ्यों से स्पष्ट हो जाता है–

1. इस समय विश्व राजनीति में चल रही शीतयुद्ध की प्रतिद्वन्द्विता से भारत ने अपने आप को अलग रखा, ताकि वह विश्व शान्ति को प्रोत्साहन देते हुए दोनों गुटों से आर्थिक सहायता प्राप्त कर सके।
2. उसने गुट निरपेक्षता और सह अस्तित्व की नीति अपनायी।
3. भारत ने विदेशों से जो आर्थिक सहायता प्राप्त की वह राजनीतिक शर्तों से युक्त रही।

वैचारिक तत्त्व– भारत की विदेश–नीति के निर्धारण में शान्ति और अहिंसा पर आधारित गाँधीवादी विचारधारा का गहरा प्रभाव पड़ा। बुद्ध द्वारा प्रतिपादित तथा अशोक द्वारा प्रचारित अहिंसा की संकल्पना और अकबर और शिवाजी द्वारा प्रदर्शित सहिष्णुता की भावना से भारत की विदेश–नीति को बराबर प्रभावित किया। विभिन्न वैचारिक आधारों को बराबर प्रभावित किया। विभिन्न वैचारिक–आधारों को ग्रहण करने के बाद भारत ने अपनी विदेश–नीति की लोकतनत्र और धर्मनिरपेक्षता जैसे मूल्यों पर आधारित किया।

राष्ट्रीय संघर्ष–भारत के स्वाधीनता संघर्ष ने विदेश–नीति के निर्धारण में उल्लेखनीय योगदान दिया, क्योंकि–

1. भारतीय विदेश–नीति में स्वतन्त्रता सर्वोपरि मूल्य बन गयी तथा महाशक्तियों के संघर्ष का मोहरा न बनने का संकल्प उत्पन्न हुआ।
2. अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के क्षेत्र में गुट निरपेक्ष रहते हुए सक्रिय भूमिधन अदा करने की भावना जाग्रत हुई।
3. हर प्रकार के उपनिवेशवाद, जातिवाद और रंगभेद का विरोध करने का अद्भुत साहस उत्पन्न हुआ।
4. विश्व में समस्त स्वाधीनता आन्दोलन के प्रति सहानुभूति उत्पन्न हुई।

राष्ट्रीय हित– पण्डित नेहरू ने संविधान सभा में स्पष्ट कहा था कि, ''किसी भी देश की विदेश–नीति की आधारशिला उसके राष्ट्रीय हित की सुरक्षा होती है और भारत की विदेश नीति का ध्येय यही है, ''भारत ने सदैव ऐसी ही नीति का अनुशरण किया है, जिससे अपने हितों की तो पूर्ति हो, परन्तु अन्य किसी के हितों को हानि न पहुँचने पाये, अतः उसने जहाँ एक ओर अपनी सैनिक शक्ति को बढ़ाया वहीं दूसरी ओर अपने को क्षेत्रीय संगठनों एवं संघर्षों से दूर रखते हुए शान्तिपूण्र सह अस्तित्व की नीति का पालन किया।

भारत की विदेश–नीति की प्रमुख विशेषताएँ– भारत की विदेश–नीति के मूल सिद्धान्त आज भी वही है, जो 1946 में अन्तरिम सरकार के गठन के समय

थे। समय एवं परिस्थितियों में बदलाव आने के फलस्वरूप ये हो सकता है कि इसमें भी कुछ बदलाव आया हो, परन्तु मूल सिद्धान्त हैं–

1. गुटनिरेक्षता। 2. पंचशील।
3. साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद तथा अन–उपनिवेशवाद का विरोध।
4. साधनों की शुद्धता।
5. नस्लवादी भेद–भाव का विरोध।
6- U.N.O. एवं विश्व–शान्ति के लिए समर्थन।
7. सबके साथ विशेषकर पड़ोसी देशों के साथ मित्रता।
8. तृतीय विश्व, एशिया–अफ्रीका के साथ एकता।
9. निःशस्त्रीकरण विशेषकर परमाणु निःशस्त्रीकरण का समर्थन।
10. राष्ट्रीय हितों पर आधारित स्वतन्त्र विदेश–नीति।
11. शान्तिपूर्ण परमाणु नीति।

1. गुटनिरेक्षता– गुटनिपेक्षता भारत की विदेश–नीति का अति महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। 1946–91 के समय में जब विश्व को दो प्रमुख महाशक्तियों के बीच शीत–युद्ध चरम पर था, उस समय पूरा विश्व दो महाशक्तियों, दो गुटों, दो व्यक्तियों के वैचारिक मतभेदों, दो सैन्य शक्ति एवं गुटों के बीच दोस्तों की संख्या बढ़ाने एवं दुश्मनों की संख्या कम करने की नीति से गुटनिरपेक्षता की नीति में

पं0 जवाहर लाल नेहरू में विदेश–नीति के जनक का झलक मिला। शान्ति एवं सुरक्षा एवं राष्ट्रीय हितों की ध्यान में रखते हुए भारत अपने आप को इस शीत–युद्ध सैन्य–संधियों तथा शक्ति राजनीति से दूर ही रखा। ताकि भारत की विदेश नीति में हम स्वतन्त्र निर्णय ले सकें। इस बात के बावजूद की अन्य देश क्या चाहते हैं, हम अपनी राय स्वयं बना सकें।

2. पंचशील– साधनों की शुद्धता के सिद्धान्त में विश्वास ने भारत को पंचशील का सिद्धान्त बनाने तथा अपनाने के लिए प्रेरित किया जो हमारी विदेश–नीति का आधार स्तम्भ है। पंचशील दूसरे राष्ट्रों के साथ शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व का सिद्धान्त है। इसे भारत शान्ति, मित्रता, सामन्जस्य एवं सहयोग के लिए तथा शस्त्र दौड़ तथा शान्ति के साधन के रूप में युद्ध की तैयारी जैसे नकारात्मक साधनों के विरूद्ध एक सकारात्मक साधन मानता है।

3- U.N.O. एवं विश्व–शान्ति– भारत U.N.O. के मूल सदस्यों में से एक है, इसने सैन फ्रांसिस्को सम्मेलन में भाग लिया था तथा U.N.O. के चार्टर पर हस्ताक्षर किये थे। अतः U.N.O. की विचारधारा का समर्थन करते तथा इनके क्रियाकलापों में सक्रियता, सकारात्मक तथा रचनात्मक रूप से भाग लेना भारतीय विदेश–नीति का महत्वपूर्ण सिद्धान्त है।

4. तृतीय विश्व के देशों के साथ एकता– भारत की विदेश–नीति जहाँ साम्राज्यवादी चंगुल से स्वतन्त्र होने वाले देशों की स्वतन्त्रता को स्थायी बनाने की रही है, वहीं इसकी इच्छा यह रही है कि देश पारस्परिक सहयोग द्वारा अपनी आर्थिक एवं तकनीकी विकास कर सके। भारत गुरु से ही एशियाई एवं अफ्रीकी देशों में एकता कायम करने का अनवरत प्रयास करता रहा है।

5. शान्तिपूर्ण परमाणु कार्यक्रम– भारत अन्तर्राष्ट्रीय स्तपर पर अन्य मंचों पर परमाणु अस्त्रों तथा परमाणु राष्ट्रों के बीच शस्त्र दौड़ का कड़ा विरोध किया है। वहीं अपनी परमाणु–कार्यक्रमों को शान्तिपूर्ण उद्देश्यों के लिये जैसा अटल जी ने 1998 में कहा था, No use first ——but——

निष्कर्ष (CONCLUSION)–भारत सदैव शान्ति का समर्थक रहा है। अतः अपने विदेश–नीति में विश्वबन्धुत्व की कल्पना की है। वहीं दूसरी ओर यथार्थवादी दृष्टिकोण रखते हुए अपनी सुरक्षा के साथ किसी भी प्रकार का जोखिम न उठाने का निर्णय लिया है। इसी परिप्रेक्ष्य में भारत ने श्री अटल बिहारी वाजपेयी, पूर्व प्रधानमन्त्री एवं स्व0 ए0 पी0 जे0 अब्दुल कलाम के नेतृत्व में 11–13 मार्च, 1998 (पोखरण–II), परमाणु परीक्षण कर स्पष्ट कर दिया। हमने जहाँ अपनी सुरक्षा बढ़ाई है, वहीं इन परमाणु अस्त्र रखने वाले देशों को यह बता दिया है कि उनके हाथों में विश्व की सुरक्षा नहीं सौंपी जा सकती। इसलिए अच्छा नेतृत्व उसे ही कहा जायेगा जो संचयात्मक होकर कार्य करता है और शक्ति सन्तुलन को कायम रखता है। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को दृष्टि में रखते हुए भारत ने भी आदर्शवादी एवं यथार्थवादी दोनों तत्वों को अपनी विदेश–नीति में स्थान दिया है।

घोषणा– ''भारत की विदेश–नीति''–यह लेख मेरी अपनी निजी एवं मौलिक रचना है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. अंतराष्ट्रीय–राजनीति– डॉ0 एस0सी0 सिंहल।
2. अंतराष्ट्रीय–राजनीति– प्रो0 (डॉ0) बी0एल0 फड़िया।
3. UPKAR-UGC-NET-II, III- Political Science- सुरेन्द्र कोशिक।
4. प्रतियोगिता दर्पण, हिन्दुस्तान, हिन्दी– इंटरनेट इत्यादि।
5. इंटरनेट इत्यादि।